Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 11, Issue 2 – June 2021

JOURNAL OF EAST-WEST THOUGHT

UGC CARE I

उषाकिरण खान की कहानियों में लोक, समाज और संघर्ष

डॉ. पंढरीनाथ शिवदास पाटिल, गंगामाई महाविद्यालय, नगाँव, धुले, महाराष्ट्र

मैथिली और हिंदी भाषा-संस्कृति में समान विद्वत्ता और जुड़ाव रखने वाली वरिष्ठ कहानीकार उषाकिरण खान की रचनाशीलता ऐसे संक्रमण काल में सृजित होती हैं जब आधुनिकता के उतरोत्तर काल के आतंक से कहानी की भावभूमि में ग्रामीणता, देहातीपन और लोकगंध की अवधारणा गायब होनी शुरू हो गई थी। यहाँ तक कि कहानी की लोकधर्मिता में जनमन के अस्तित्व पर खतरा मंडराने लगा था। मनुष्यता के सारे मानदंड एक सिरे से ध्वस्त किए जाने लगे थे। स्वाधीन भारत में जीते हुए निचले तबके के लोग धर्म और जाति के चक्कर में पड़कर जंगली जीवन जीने के लिए मजबूर हो गए थे। ऐसे समय में उषाकिरण खान जी समाज के समसामयिक परिप्रेक्ष्यों को अपनी रचनाओं में प्रश्नों के साथ चिह्नित करती हैं। एक तरह से कहा जाए तो ग्रामीण लेखन के क्रम में रेणु-नागार्जुन के बाद उषाकिरण खान रचनाओं में एक नए ढंग से लिखने का दायित्व उठाती हैं। अपने समाज और देश से जुड़ाव के साथ उनकी समस्याओं को आत्मसात करके लेखन के माध्यम से अपनी आवाज को प्रशासन तक पहुँचाने का काम करती हैं। वास्तव में, इनकी कहानियों में मानवीय मूल्यों का संरक्षण, जीवनी शक्ति और सामाजिक-सांस्कृतिक नवनिर्माण की उत्कट हलचल है। इस विषय पर नागार्जुन लिखते हैं- "लिखो, तो लिखने लगी। बाबा ने लिखने का आदेश देने के साथ-साथ यह अच्छे से समझा दिया कि लेखक और उसके पात्रों की भाषा अलग-अलग होनी चाहिए। लेखक जब लिखे तो हिंदी में लिखे, पात्र अपनी भाषा बोले। पात्र अपने परिवेश और वातावरण के हिसाब से बोलेगा। उषा जी ने इस सीख को गाँठ बाँध लिया और अपने कथा लोक में इसका निर्वाह किया।" उषाकिरण जी ने अपनी लेखनी का लोकपथ चुना और उसी पथ पर आजीवन सृजन-कार्य करती रहीं।

उषा जी के यहाँ लोक के अनेक रंग हैं। ग्रामीण संवेदना का एक ऊर्जात्मक स्वरूप है। वह लोक की धड़कन को सुनती हैं, उसी क्रम में शब्दों को बुनती हैं। शब्दों के लहजे में सुख-दुःख बाँटती हैं। उनकी कहानियों में एक अलग किस्म की वैचारिकी है जो लोक-जीवन के बनते-बिगड़ते संबंध, नर-नारी-मन की व्यथा और देहाती जीवन का ताना-बाना रेखांकित करती है। उनकी रचनाएँ जीवन-संघर्ष और जीवन-द्वंद्व की सृजनात्मक अभिव्यक्ति है। अपनी कहानियों में प्रकृति के बदलाव के साथ मानवीय जीवन के बदलते घटनाक्रमों को बहुत ही सुंदर तरीके से शब्दों में पिरोती हैं। एक वाक्य में कहा जाए तो उनकी कहानियाँ मैथिल समाज की जनश्रुतियों का वह हिस्सा है जहाँ कहानियों में समाज की विविध कड़ियाँ दिखाई देती हैं जहाँ वह अपने साहित्य कर्म के लिए लेखन-संसाधन तैयार करती हैं। वास्तव में उनका लेखन उस भारतीय लोक परंपरा की अगली कड़ी है जहाँ का समाज गुलाम भारतीय समाज से लेकर आजाद भारत की परंपरा को लेकर आगे बढ़ता दिखता है। सच कहा जाए तो अंचल, देहात और लोक को एक साथ जोड़कर सृजन कर्म से जुड़ी उषा जी पहली महिला कहानीकार हैं जिनकी रचनाओं में कोशी के कच्छार से लेकर नगरीय जीवन के समस्त व्यथा-संघर्ष शामिल है।

उषाकिरण जी की कहानियों को बारीकी से समझने की कोशिश करेंगे तो आपको उनकी कहानियों में परंपरा और आधुनिकता का द्वंद्व दिखाई देगा। अपनी कहानियों में परंपराओं से विमुख हो रही संस्कृति के

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: 2168-2259 (online)
(https://jetjournal.us/)
Volume 11, Issue 2 – June 2021
UGC CARE I

बीच परंपरा और यथार्थ के द्वंद्व और फिर परंपरा और यथार्थ की संस्कृति को एक रास्ते पर लाने की कोशिश भी है। आस्था और विश्वास, लक्ष्य और मूल्य, साधन और क्रिया में अतीत से वर्तमान तक चली आई निरंतरता की धाराओं को हम जिसे परंपरा कहते हैं, उसकी उपादेयता और उपयोगिता ही समय की परंपरा को परिलक्षित करती है। यह परंपरा ही है जो समाज की पहचान को जीवित रखती है। यही कारण है कि आज विकास की असफलताओं और आधुनिकीकरण की विकृतियों ने हमें अपनी जड़ों की ओर लौटने पर मजबूर किया है। इनकी एक कहानी 'अम्मां मेरे भैया को भेजो री, कि सावन आया' में रजिया एक डॉक्टर है और शहर में डॉक्टरी करती है लेकिन गाँव की यादें शहर की चकाचौंध और मुखौटे वाले जीवन में उनके लिए अमृत का काम करती हैं। मन में गाँव लौट जाने की इच्छा जागृत होती रहती है परंतु गाँव ने अब परिवर्तन की आँधी में अपनी सुंदरता को खो दिया है। अब खेतों से निकला हुआ अनाज पोलीथिन और डिब्बे में बंद होकर शहर के बड़े-बड़े मॉल में सजने लगा है। स्वार्थ ने गाँव को केवल उगाही का केंद्र बनाकर रख दिया है। जितना शोषण हो, किया जाने लगा है। जितना निचोड़ा जाए, उससे ज्यादा निचोड़ा जाने लगा है। आज नेता ही नहीं बल्कि आम जन भी गाँव की कीचड़ में दुर्गंध देखने लगे हैं। आज गाँव सिर्फ कागज में विकसित हुआ है। अकाल और बाढ़ गाँव के लिए उसकी नियति बन गई है। कोशी नदी हर बार अपनी विनाश लीला से सबको निगलने को आतुर रहती है। सिर्फ सड़कें बना देने से बाढ़ की विभीषिका को दूर नहीं किया जा सकता है। गाँव के लोग जब पढ़-लिख लेते हैं तो वो गाँव में रहना नहीं चाहते हैं और न ही गाँव की उन्नति के बारे में सोचते हैं कि गाँव को गाँव की ही शक्ल में उन्नत कैसे किया जाए। आज मनुष्य कितना ही आधुनिक क्यों न हो जाए, मशीनी संस्कृति में कितना भी सुख तलाश ले, पर सुकून उनको अपनी जड़ से जुड़कर ही मिलता है। आज मोबाइल संस्कृति ने 'नानी की कहानी' वाली संस्कृति को खा लिया है। 'संस्कृति का कल्पतरु' आज बडी-बडी अट्टालिकाओं ने छिपा लिया हैं। 'आँखें स्निग्ध तरल और बहुरंगी मन' चमचमाते शॉपिंग मॉल में गुम हो गया है। आज 'रतनारे नयन' की मासूमियत को ब्यूटी पार्लर का ग्रहण लग गया है। यही कारण है उनकी कहानियाँ हमें शहर से गाँव की ओर जाने के लिए बाध्य करती हैं। उनकी आंचलिक कहानियाँ हमारे अंदर प्रेम, परंपरा और समर्पण की सोंधी खुशबू से मन को स्पंदित करती हैं।

आज का समय व्यक्तिनिष्ठता और स्वार्थपरता का है। यह प्रवृत्ति केवल शहर में ही नहीं बल्कि गाँव-गाँव में भी अपना पैर पसार चुकी है। खोखलापन, अमानवीयता और संवेदनारहित समाज आज शून्यता, यांत्रिकता का शिकार बन बैठा है। यह तर्कहीन समाज आज जातिगत भेदभाव, आपसी वैमनस्य और सांप्रदायिक-सामुदायिक प्रपंच में फंसकर रह गया है। आज गाँव इस प्रपंच से बच नहीं पा रहा है। ऐसे समय में उषाकिरण खान अपनी कहानियों में भारतीय समाज विशेषकर मिथिलांचलीय समाज का वह दर्पण पेश करती हैं जहाँ मध्यकालीन समय से लेकर 21वीं सदी के समाज के विविध पक्षों का चित्रण है। उनकी कहानियों में एक तरफ पीड़ा है तो दूसरी तरफ संघर्ष का सौंदर्य है। एक तरफ समाज की स्वार्थपरता है, वहीं उससे बचने के लिए मानवता की उच्चतम पराकाष्ठा भी है। एक तरफ शोषण-शोषित का विकराल रूप है तो दूसरी तरफ ग्राम-जीवन, माटी-पानी, श्रम से लिप्त सपने, जीवन से जुड़ी मान्यताएँ-परंपराएँ भी हैं जो उषा जी की कहानियों में एक तरह से संवेदनात्मक ज्ञान का विस्तार करती नजर आती हैं। "अंचल के प्रति प्रेम और विश्वास ही उषा की कहानियों में आस्था का रसायन है और यह बाबा नागार्जुन के सान्निध्य का ही परिणाम है। यह सच है कि मिथिला में उषा जी की आत्मा निवास करती है, जिसकी परिणति कथा के रूप में होती है। उनके यहाँ मैथिल संस्कृति ही विस्तृत होकर लोक-संस्कृति का हिस्सा बन जाती है।" उनकी पहली कहानी

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 11, Issue 2 – June 2021

UGC CARE I

1978 में 'आँखें स्निग्ध तरल और बहुरंगी मन' नाम से प्रकाशित हुई थी। उसके बाद आईं 'जलकुम्भी', 'नीलकंठ', 'कुमुदिनी' आदि असंख्य कहानियाँ जो मिथिला की प्रकृति और संस्कृति से जुड़ी हुई हैं। उनकी एक कहानी है- 'गाँव को गाँव ही रहने दो'। इस कहानी के अंत में कहती हैं कि 'परिवर्तन हो पर गाँव को गाँव ही रहने देना' । वास्तव में आज हम जो भौगोलिक परिवर्तन देख रहे हैं। इस परिवर्तन में व्यक्तिनिष्ठा और स्वार्थपरता का मुलम्मा चढ़ा हुआ है जहाँ सिर्फ मुनाफा देखा जाता है। आज इस परिवर्तन की अंधी आँधी के कारण उषा जी के कई गंवई सपने टूटते दिख रहे हैं। मुनाफे की होड़, वोट की राजनीति और नगरीकरण की सभ्यता ने अनगिनत गाँवों की आहुति दे डाली है। वास्तव में, मूल्यहीनता, अमानवीयता के बीच मानवता के प्रति अटूट आस्था को बचाने की ललक उषा जी की कहानियों में पल रही लोकभूमि का उषाकिरण खान किसानी-ग्रामवासी मानसिकता वाली कहानीकार हैं। उनकी अभिन्न अंग है।

कहानियों में मुख्य रूप से ग्रामीण जीवन के दुख-सुख, इच्छा-आकांक्षा, श्रम-संघर्ष गीत-व्यवहार बहुत ही सुंदर तरीके से देख सकते हैं। उनकी सबसे बड़ी खासियत यही है कि वे ग्रामीण जीवन के प्रत्येक पड़ाव को बारीकी से देखते-समझती हैं और उसको लेखनी में जगह देती हैं। वास्तव में नागार्जुन-रेणु की तरह ही उषा जी के मन में एक गाँव बसता है, साथ ही साथ वे एक तरह से गाँव के दर्द, बेचैनी और संघर्ष की साक्षी भी रही हैं। 'दूब-धान' कहानी में उषा जी की ग्रामीण संवेदना उभरकर सामने आती है। इस कहानी की प्रमुख पात्र केतकी के माध्यम से लेखिका ग्रामीण-देहाती स्मृतियों को टटोलने का प्रयास करती हैं। इस कहानी में एक तरफ जहाँ सामूहिक जीवन-दर्शन के प्रति समर्पण का भाव है, वहीं दूसरी तरफ गाँव की माटी की सोंधी खुशबू के प्रति आकर्षण भी है। इस कहानी में केतकी गाँव और शहर के बीच बढ़ रही दूरी को कम करना चाहती है क्योंकि आज जिस तरह से लोग विस्थापित होकर शहर में समाते जा रहे हैं, गाँव की सारी लोकधर्मिता शहरी सभ्यता में तब्दील होती जा रही है। ऐसे समय में केतकी गाँव की प्रकृति और संस्कृति को बचाए रखने के अथक प्रयास में लगी रहती है। केतकी बार-बार अपनी भाभी से कहती रहती है- "भाभी गाँव में कोई समारोह करिए, काफी दिन हो गए। तो भाभी ने उत्तर दिया था- गाँव में सड़कें बन रही हैं, घर तैयार हो रहे हैं। फिर देखूंगी।"3 शहरी मानवकृत नीति के आगे गाँव की दीवानी केतकी का हर प्रयास विफल हो जाता है। आज वैश्विक गाँव की चमकती दुनिया में कितनी ही केतकी ने अपने गाँव को तिलांजलि दे दी है, कहा नहीं जा सकता। आज गाँव से पलायन और शहर में बसना एक फैशन-सा बन गया है। आज गाँव की सामाजिकता, सामूहिकता को शहर के एकाकीपन ने निगल लिया है और आमजन इसलिए खुश भी है, वो शहरी बनते जा रहे हैं। यही कारण है कि केतकी बच्चों की छुट्टियों में भले ही दुनिया घूम लेती है परंतु संतोष का अनुभव नहीं कर पाती। आज केतकी कंक्रीट सभ्यता में रहते हुए कोशी की मिटटी, पानी, कोर-कछार को अपने जेहन से निकाल नहीं पाती।

इसी कहानी में आगे के क्रम में जब केतकी भाभी के बेटे के जनेऊ में शामिल होने गाँव जाती है तो उसे गाँव का सारा सौंदर्य बेरंग सा लगता है। गाँव की भाषा-बोलियों, गीत और लोककथाओं में आधुनिकता की सेंधमारी हो चुकी है। संवेदनाओं में खोखलापन जान पड़ रहा था। इस रूप को देखकर स्तब्ध रह जाती है और मांगलिक कार्यक्रम के खत्म होने और शहर लौट जाने के लिए आतुर हो जाती है। निराशा हाथ में लेकर लौटती केतकी के चेहरे पर आशा की किरण तब फूटती है जब एक मुस्लिम स्त्री सबुजनी बड़ी आत्मीयता से केतकी का स्वागत एक ब्याही बेटी की माँ की तरह करती है- "अच्छा हुआ ! ग्राम समाज को देखने आ गई। तू बिना माँ की बेटी हम सबकी बेटी । अरे कहाँ गई सुलेमान की कनिया, जरा सोना-सिंदूर ले आ, केतकी की

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: 2168-2259 (online)
(https://jetjournal.us/)
Volume 11, Issue 2 – June 2021
UGC CARE I

मांग भरे। एक चुटकी धान- दूब ले आ, खोइंछा भर दे।" यह दृश्य केतकी के आँखों से भावनात्मक आँस को आह्लादित करने के लिए काफी था। इस कहानी की दोनों पात्र-सब्जनी और केतकी समाज के जाति-भेद और सांप्रदायिक कुरीतियों पर मनुष्यता की भावभूमि को स्थापित करती है जो लोक परंपरा का अभिन्न अंग है उषाकिरण खान की कहानियों में वर्ग-संघर्ष ज्यादा देखने को मिलता है।

'मौसम का दर्द' कहानी इस संघर्ष को बहुत ही सुंदर तरीके से उभारने का प्रयास करती हैं। आधुनिकता की आँधी ने आज गाँव में पूंजीवादी संस्कृति को ला दिया है। इस संस्कृति ने मानवता के स्थान पर स्वार्थ की संस्कृति को ज्यादा प्रश्रय दिया है। अब गाँव में हर जाति अपने अधीनस्थ एक निचली जाति खोज लेती है और अपने को वर्चस्ववादी नजरिये से देखना शुरू कर लेती है। यहीं से वर्ग-संघर्ष की तांडव लीला शुरू हो जाती है जो गाँव की सामाजिकता को नष्ट कर वर्चस्ववादी शक्तियों पर बल देने लगती है। इस कहानी के नायक इंजीनियर बाबू और नायिका आड़हुलिया के बीच जन्म ले रहा प्रेम इसी संघर्ष का शिकार बन जाता है। उषा जी की कहानियों पर लिखते हुए रामचंद्र तिवारी लक्षित करते हैं- "आपकी कहानियों में वर्ग-संघर्ष के साथ आंचलिकता का स्पर्श अवश्य है, किंतु इस आंचलिकता की लोक-गंध ने आपको आधुनिक जीवन की अंधी अमानवीय व्यावसायिक दौड़ से जूझने और मनुष्यता के कोमल तत्वों को बचाए रखने की शक्ति प्रदान की है।" आधुनिक मध्यवर्गीय समाज में व्याप्त अमानवीयता और मूल्यहीनता के इस दौर में मनुष्यता के प्रति अटूट आस्था ही उषाकिरण खान की विशिष्ट पहचान और शक्ति है। विशिष्ट पहचान इसलिए भी है कि उन्होंने अपनी रचनाओं में शिक्षित-अशिक्षित, सभी जातियों, वर्ग और धर्म के लोगों की त्रासदी और संघर्ष की जीवंत गाथा की प्रस्तुति की है। 'मौसम का दर्द' कहानी की तर्ज पर उनकी एक कहानी है- 'विषतंतु' । यहाँ लेखिका कहती हैं कि "आधुनिक समाज तब तक इतना उदार न हो पाया था कि किसी स्त्री को उस हद तक स्वीकार करता।" आज भी स्त्रियाँ अपने अस्तित्व को बचाए रखने के लिए संघर्ष करती नजर आती हैं। आज समाज जिस तरह पाश्विकता के चंगुल में फँसकर मानवता को नष्ट करने पर तुला है। ऐसे समय में 'विषतंतु' की नायिका सुलोचना आगे बढ़कर अपने संकल्प के लिए संघर्ष करती नजर आती है। उषा जी अपनी कहानी में अपने विचार को रखते हुए कहती हैं कि 'सुलोचना; जिसका आश्रम खोलने के बाद समाज को एक सही दिशा में लाना ही एकमात्र उद्देश्य नहीं था बल्कि वह समाज में ही मानवीयता और पाश्विकता के बीच बढ़ रहे फाँक को भी बखूबी दिखाने का प्रयास करती हैं।'

स्त्री अस्मिता की कसौटी में उषा जी की कहानियों को देखेंगे तो पाएँगे कि वे कितने संतुलित और भावपूर्ण पात्रों के माध्यम से स्त्री संघर्ष और अपने आप को बचाने की जद्दोजहद को रेखांकित करती हैं। उनके स्त्री पात्रों में न तो बुद्धिवाद का अतिक्रमण है और न ही संवेदनात्मक मूर्खता । 'स्त्री को समाज में किस नजरिये से देखा जाता है और समाज एक स्त्री के प्रति किस तरह से दायित्व का निर्वाह करता है. आदि प्रश्नों को सामने रखकर उषा जी समाज से जवाब माँगती हैं कि "अकेली स्त्रियों की समाज में क्या व्यवस्था है, उनका क्या मूल्य है? यह प्रश्न शाश्वत है। तलाकशुदा, अविवाहित और विधवा स्त्री प्रश्न चिन्ह है।" उषा जी इस प्रश्न के खिलाफ अपनी कहानी 'पाथर मन' में स्त्री के विद्रोहात्मक स्वर को बुलंद करती हैं। भले ही कुछ अपवादों को छोड़ दिया जाए तो स्त्री आर्थिक रूप से स्वावलंबन की आस न ही रखती है और न ही आर्थिक बंटवारे की बात करती है परंतु जब पितृसत्ता और मर्दवाद उनके ऊपर हावी होने लगता है तब वह अपनी इज्जत, स्वावलंबन और आत्मसम्मान के कारण विद्रोह करना अपना नैतिक कर्म बना लेती है। वास्तव में हिंदी साहित्य में महिलाओं को अब तक समानता का अधिकार नहीं मिला है, जबकि रचना जगत में महिलाएँ लगातार अपने

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 11, Issue 2 – June 2021

JOURNAL OF EAST-WEST THOUGHT

UGC CARE I

सृजनकर्म से अपनी उपस्थिति दर्ज कर रही हैं। उषा जी दुखी मन से कहती हैं कि "समय पर महिला कभी भी स्थिर नहीं रहती, जैसे 'विषतंतु' कहानी में पात्र सुलोचना कहती है मेरी प्रतिष्ठा दाँव पर है।" 'पाखंड पर्व' और 'उमा महेश' जैसी कई कहानियाँ हैं जहाँ एक वृद्ध पात्र 'रुकिया' पंचायत में अपने बुलंद सत्य-साहसी उपस्थिति से परिवार के प्रति अपने उत्कट समर्पण को दिखाती है और अपने बेटे और पतोहू को समाज के कुकर्म जाल से बचाने का प्रयास भी करती है। वह भले ही शारीरिक रूप से वृद्ध है परंतु मानसिक रूप से अपने परिवार के लिए दृढ़ता से डटी रहती है। वह कहती है- "मार-डाल, बेटा को सिखा-पढ़ाकर चोर-उचक्का बना दिया। पतोहू को सब मिलकर भोग लगाते हो। नहीं-नहीं मैंने किसी समय सुंदर बाबू को अपने घर-आंगन में नहीं देखा। 10 आज भले ही हमारी नजरों में एक वृद्ध का जीवन लाचारगी और बेबसी भरा हो, परंतु जीवन की तमाम कुरूपताओं और विद्रूपताओं से संघर्ष करती हुई उषा जी की कहानियों में जो वृद्ध पात्र आए हैं, वे सब के सब जिजीविषा के उत्तुंग साहस से भरे हुए हैं। वहीं दूसरी तरफ उमा पति के बगैर अपने परिवार का दृढ़ता से भरण पोषण पूर्ण करने की सक्षमता प्रदर्शित करती है। भले ही बार-बार बेटी जन्म देने के कारण उसका शराबी पति बाल खींचकर पिटाई करता है-" चुड़ैल, कमीनी, मादर ... तरह तरह की गाली देता है।

कहता है कि मादर ... तुम एक बेटा नहीं जन्मा सकती, ... कौन यह समझाए कि किस संपत्ति का वारिस पैदा होना है, इसी मजदूरी और शराब की लत का? समझाने बैठा है कौन? उमा की चौथी संतान बेटा हुआ। महेश ने बड़ा जश्न किया। कर्ज लेकर पार्टी की। साल भर भी नहीं गुजरा कि एक और बेटी आ गई।"" समाज में उमा-महेश जैसे पात्र भरे पड़े हैं जिनका यथार्थ चित्रण उषा जी की कहानियों में देखने को मिलता है। जहाँ परिवार का मर्द निष्क्रिय हो जाता है वहाँ स्त्री दृढ़ता के साथ अपने दायित्व का पालन करती नजर आती है। उषा जी अपने स्त्री पात्रों के माध्यम से यह दिखाने पर बल देती हैं कि यह भ्रम न पालें कि स्त्रियाँ सिर्फ बच्चे जन्म देने भर की मशीन हैं। वास्तव में, उषा जी की कहानियों में स्त्री की शक्ति और सामर्थ्य की अद्भुत पड़ताल की गई है। उनकी अपनी मान्यता है कि 'भारतीय समाज को बचाना है, समाज को स्वस्थ और संवेदनशील बनाना है तो हमें स्त्रियों को अधिक से अधिक शिक्षित और सक्षम बनाना होगा।' इनकी कहानियों में भारतीय ग्रामीण समाज की शक्तिशाली स्त्रियों से हमारा साक्षात्कार होता है जो बाकी दलित-दमित स्त्रियों के लिए एक मॉडल तैयार करती हैं।

उषा जी की कहानियाँ गाँव में पल रही रूढ़ियों, अंधविश्वासों और कुरीतियों से लड़ती हुई एक आदर्श और नैतिक समाज के निर्माण की पक्षधरता पर बात करती हैं। साहित्य और समाज का अविच्छिन्न संबंध होने के कारण समाज में जो भी घटनाएँ घटती हैं वे सभी साहित्य में अंकित होती हैं। साहित्य का स्तंभ सामाजिक वातावरण की नींव पर खड़ा है। समकालीन समाज के सारे रीति-नीति-कर्म-धर्म समाज की लोकधर्मिता को निर्धारित करते हैं। 'रामचरितमानस' इसका सफल उदाहरण है जो आज भी अंधकार में डूबे लोगों को पथ प्रदर्शक का काम करती है। 'कौस्तुभ स्तंभ, 'बाकी का काम अख़बार वाले कर देते हैं' जैसी कहानियों में राजनेता और मीडिया वाले समाज में आपसी सौहार्द को सांप्रदायिकता में तब्दील करने में लगे रहते हैं। ऐसे समय में उषा जी धार्मिक सहिष्णुतास्वरूप मिथिला परंपरा को सामने लाते हुए कहानी में लिखती हैं कि "याद आता है कि कैसे इस्लाम धर्म मानते हुए सबुजनी जितिया और छठ करती थी। "12 वास्तव में उषा जी आज ऐसे समाज की परिकल्पना पर जोर देती हैं जहाँ हिंदू हो या मुस्लिम, दोनों एक दूसरे के पर्व-त्योहार में स्वच्छ मन से शरीक हों, धर्म विशेष से ऊपर उठाकर मनुष्य मात्र को जीवन का अभिन्न अंग बनाकर चले। आदर्श समाज की परिकल्पना के दर्ज पर उषा जी 'आकाँक्षाओं के दीप' कहानी में गाँव-समाज को समावेशिक

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved

Journal of East-West Thought
ISSN: *2168-2259 (online)*
(https://jetjournal.us/)
Volume 11, Issue 2 – June 2021
UGC CARE I

समाज बनाने पर बल देती हैं जहाँ सभी धर्म-जाति-भाषा के लोग सभी के सुख-दुःख में सम्मिलित हों और सभी के मन में सभी के प्रति समर्पण का भाव रहे।

अंततः उषाकिरण खान जी अपनी कहानियों में सबसे महत्वपूर्ण बल मानवता की संस्कृति पर देती हैं। भावप्रवणता और संवेदना इनकी कहानियों में चित्रित मानवतावादी दृष्टिकोण की सबसे महत्वपूर्ण कड़ी हैं। मिथिला में जन्मी उषा जी की कहानियों में मिथिला की मिट्टी की सुगंध व्याप्त है। उनका जड़ से जुड़ाव ही कहानी में आत्मीयता की जमीन को तैयार करने के लिए बल देता है। आज के संवेदनहीन समाज में उषाकिरण खान की कहानियों का महत्व और प्रासंगिकता और भी ज्यादा बढ़ गई है क्योंकि आज जब बाजार द्वारा चलाए गए विघटनवादी, स्वार्थपरायण समाज में इंसान की मासूमियत को बचाना एक संकट-सा बन गया है, ऐसे समय में उषा जी जीवन के कई प्रसंगों को अपनी कहानियों में समाहित कर उसकी सार्थकता को तलाश करती नजर आती हैं। वास्तव में उनकी कहानियों में संस्कार है जो हमें अपनी परंपरा के प्रति समर्पण की भावना को जिंदा रखने में बल देता है।

संदर्भ-

1. गीताश्री, उषाकिरण खान-किस्सों की खान, प्रलेक प्रकाशन, मुंबई, 2020, पृष्ठ-5
2. कुमार वरुण सं, उषा हिंडोला- उषाकिरण खान का रचना संसार, अमन प्रकाशन, कानपुर-2019, पृष्ठ-12
3. नोटबुक, पृष्ठ-50
4. गोपाल राय, उषाकिरण खान की संकलित कहानियाँ, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ- 59
5. कुमार वरुण सं, उषा हिंडोला- उषाकिरण खान का रचना संसार, अमन प्रकाशन, कानपुर-2019, पृष्ठ-162
6. उषाकिरण खान, उषाकिरण खान की लोकप्रिय कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ-13
7. गोपाल राय, उषाकिरण खान की संकलित कहानियाँ, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ-73
8. छबिल मेहेर कुमार, उषाकिरण खान, अनन्य प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015 पृष्ठ-21
9. गोपाल राय, उषाकिरण खान की संकलित कहानियाँ, राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, नई दिल्ली, 2017, पृष्ठ-3
10. उषाकिरण खान, उषाकिरण खान की लोकप्रिय कहानियाँ, प्रभात प्रकाशन, नई दिल्ली, 2015, पृष्ठ-17
11. नोटबुक, पृष्ठ-53

Copyright © | JET Network, All Rights Reserved